बुद्ध वचन

(भगवान बुद्ध के मूल उपदेश)

नवम्बर-दिसम्बर, २०२२ अंक-१०

प्रकाशक - महाबोधि सोसाइटी ऑफ इण्डिया, लखनऊ केन्द्र
भन्ते ज्ञानालोक (विहाराध्यक्ष), बुद्ध विहार, रिसालदार पार्क, लखनऊ, पिन-226018
मो0 :- 7318036520, ई-मेल :- mbsilucknow@gmail.com

आलवक सूत्र

भगवान् बुद्ध के द्वारा आलवक का दमन

एक समय भगवान् बुद्ध आलवी के आलवक यक्ष के भवन में साधना हेतु विराजमान थे। तब वह आलवक जहाँ भगवान् थे, वहाँ गया। जाकर भगवान् से यह कहा- श्रमण निकल जाओ! बहुत अच्छा आवुस कहकर भगवान् निकल गये। श्रमण भीतर आओ! बहुत अच्छा आवुस कहकर भगवान् भीतर आ गये। दूसरी बार भी आलवक ने भगवान् से कहा। श्रमण बाहर निकल जाओ! बहुत अच्छा आवुस कहकर भगवान् बाहर निकल गये। श्रमण भीतर आओ! बहुत अच्छा आवुस कहकर भगवान् भीतर आ गये। तीसरी बार भी आलवक ने भगवान् से कहा, श्रमण बाहर जाओ! बहुत अच्छा आवुस कहकर भगवान् बाहर निकल गये। श्रमण भीतर आओ! बहुत अच्छा आवुस कहकर भगवान् भीतर आ गये। चौथी बार भी आलवक ने भगवान् से यह कहा- श्रमण बाहर निकल जाओ! आवुस मैं नहीं बाहर निकलूँगा जो तुझे करना हो करो।

श्रमण! मैं तुमसे प्रश्न पूछूँगा। यदि तुम मेरे प्रश्नों का उत्तर न दे सकोगे तो तेरे चित्त को विक्षिप्त कर दूंगा। या तेरे हृदय को फाड़ डालूँगा। अथवा पैरों से पकड़कर गंगा के उस पार फेंक दूंगा। आवुस! मैं, देवता, मार और ब्रह्म सहित श्रमण और ब्राह्मणों वाली प्रजा तथा देव मनुष्यों वाले लोक में ऐसे किसी को नहीं देखता जो मेरे चित्त को विक्षिप्त कर दे या हृदय को फाड़ डाले अथवा पैरों से पकड़कर गंगा के उस पार फेंक सकें। फिर भी तुम आवुस, जो कुछ पूछना चाहते हो पूछो। तब आलवक ने भगवान् से गाथा में कहा।

आलवक- इस संसार में पुरूष को कौन सा धन श्रेष्ठ है? जिसका अभ्यास सुखदायक होता है? रसों में कौन स्वादिष्टतर होता है? कैसा जीवन श्रेष्ट जीवन कहलाता है?

भगवान्- इस संसार में पुरूष का श्रद्धा धन ही श्रेष्ट है। भली प्रकार के अभ्यास किया हुआ धर्म सुखदायक होता है। सत्य सभी रसों में स्वादिष्टतर है। प्रज्ञाजीवी का जीवन श्रेष्ट कहलाता है।

आलवक- मनुष्य कैसे सांसारिक बाढ़ को पार कर जाता है? और कैसे भवसागर को लाँघ जाता है? कैसे दुःख को समाप्त कर देता है? और कैसे परिशुद्ध होता है?

भगवान्- मनुष्य श्रद्धा से सांसारिक बाढ़ को पार कर जाता है, अप्रमाद से भव सागर को लाँघ जाता है। पराक्रम से दुःख को समाप्त कर देता है और प्रज्ञा से परिशुद्ध हो जाता है।

आलवक- मनुष्य कैसे प्रज्ञा प्राप्त करता है? कैसे धन पाता है? कैसे यश प्राप्त करता है? कैसे मित्रों को मिलाकर रखता है? कैसे इस लोक से मरकर परलोक में जाने पर शोक नहीं करता है?

भगवान- निर्वाण की प्राप्ति के लिए अरहन्तों के धर्म में श्रद्धा रखने वाला अप्रमादी और चतुर व्यक्ति श्रद्धापूर्वक धर्म सुनने से प्रज्ञा प्राप्त करता है।

उचित कार्य को करने वाला, धैर्यवान और परिश्रमी व्यक्ति धन पाता है। सत्य से यश प्राप्त करता है। और देने वाला मित्रों को मिलाकर रखता है।

जिस श्रद्धालु गृहस्थ में सत्य, धर्म, धैर्य और त्याग- ये चार बातें होती है, वह मरकर इस लोक से परलोक में जाकर शोक नहीं करता है।

अब तुम अन्य श्रमण ब्राह्मणों के पास जाकर पूछो कि सत्य, इन्द्रिय दमन, त्याग और क्षान्ति (शान्ति) से बढ़कर कुछ और भी है?

आलवक- अहो! मेरी भलाई के लिए भगवान् बुद्ध आलवी में मेरे निवास पर आये। आज मैं यह जान गया हूँ कि जहाँ दान देने से महाफल होता है।

अब मैं गाँव से गाँव और नगर से नगर में, सम्बुद्ध और उनके सुधर्मता युक्त धर्म को नमस्कार करते हुए विचरण करूँगा।

ऐसा कहने पर आलवक ने भगवान से यह कहा- बहुत अच्छा हे गौतम! बहुत अच्छा हे गौतम! बहुत अच्छा हे गौतम! जैसे कि हे गौतम, उलटे हुए को सीधा कर दे, ढ़ँके हुए को उघाड़ दे, रास्ता भटके हुए को रास्ता बतला दे, और अन्धकार में तेल के प्रदीप को धारण करे, जिससे आँख वाले रूप देख सकें, ऐसे ही आप गौतम द्वारा अनेक प्रकार से धर्म प्रकाशित किया गया। अब मैं भगवान गौतम बुद्ध की शरण जाता हूँ, धर्म और भिक्षु संघ की भी शरण जाता हूँ। मुझे आप गौतम आज से जीवन पर्यन्त शरणागत उपासक की तरह धारण करें।

गन्धत्थेन सुत्त (पद्यसूत्र)

सत्पुरूषों का अदत्त सुगन्ध लेना भी चोरी है।

एक समय कोई भिक्षु कौसल के किसी वनखण्ड में साधना हेतु ठहरा हुआ था। वह भिक्षु किसी दिन, भिक्षा करने के बाद, किसी पुष्करणी में उतर कर वहाँ खिले पद्मपुष्पों की गन्ध लेने लगा। उस समय उस पुष्करणी के अधिष्ठात्री देव ने, उस भिक्षु पर अनुकम्पा करते हुए, उस भिक्षु को सत्पथ पर लाने के लिये, उस भिक्षु के पास आ कर यह गाथा कही-

मार्ष- पूज्य! आप जो यहाँ यह दूसरों के पद्मपुष्पों की गन्ध का विना दिये सुखानुभव कर

रहे हैं, यह भी एक प्रकार की चौरी है। अतः आप "सुगन्धचोर" हैं।

(भिक्षु-) हे देव! मैं न तो यहाँ से कुछ ले जा रहा हूँ, न कुछ नष्ट ही कर रहा हूँ, केवल इन पुष्पों की गन्ध दूर से ले रहा हूँ। तब भी किस कारण आप मुझे "सुगन्धचोर" कह रहे हो। जो इनको मूल से उखाड़ देता है, उनकी पुण्डरीक (कलियों) को खा जाता है, ऐसा कार्य करने वाले को आप कुछ क्यों नहीं कहते?

(देव-) अतिलोभी पुरूष धात्री के वस्त्रों की तरह मलिन है। उसे कहना या परापर्श देना व्यर्थ है। हाँ! आप को कहा जा सकता है; क्योकि, नित्य निष्पाप एवं पवित्र आचरण करने वाले पुरूष का बाल जितना सूक्ष्म पाप भी आकाश जितना महान दिखायी देता है।

(भिक्षु-) अरे! इस देवता ने मेरी वास्तविकता जान ली, इसी लिये यह मुझ पर (मेरा दोष बताकर) अनुकम्पा कर रहा है! हे देव! मेरा ऐसा प्रमाद, तुम आगे भी कभी देखो तो मुझे सावधान करते हुए उससे रोकना।

(देव-) भिक्षु! मैं आपका वेतनभोगी कर्मचारी नहीं हूँ कि मैं तुम्हे प्रतिक्षण सावधान करता चलूँ! आप स्वयं सावधान रहें जिससे आप को सुगति प्राप्त हो।

नारद सूत्र

किसी के भी द्वारा पाँच अलभ्य स्थान

एक समय आयुष्मान नारद थेर पाटिलपुत्र के कुक्कुटाराम विहार में साधना हेतु ठहरे थे। उस समय राजा मुण्ड की भद्रा नामक रानी का देहावसान हो गया जो इस राजा की अतिशय प्रिय एवं स्नेहभाजन थी। वह अपनी प्रिय भद्रादेवी के देहावसान से इतना विचलित हो गया कि उसके बाद न, स्नान करता था, न शरीर पर गन्धविलेपन या भोजन करता था, न अन्य कोई कार्य करता था। वह राजा रातदिन केवल भद्रादेवी के शरीर पर मूर्छित होकर पड़ा रहता था। तब राजा मुण्ड ने अपने प्रियक नामक कोषरक्षक को यह आदेश दिया- "सौम्य प्रियक! भद्रादेवी के इस शरीर को तेल से भरी हुई किसी लौहनिर्मित द्रोणी (नौका सदृश कड़ाही) में रखकर किसी अन्य रिक्त द्रोणी से ढक दिया जाय, जिससे हम भद्रादेवी का यह शरीर चिरकाल तक देखते रह सकें।" कोषरक्षक प्रियक ने "अच्छा देव!" कहते हुए राजा मुण्डक की आज्ञा मानकर भद्रादेवी के शरीर को एक तेल से भरी द्रोणी में रखकर उसको दूसरी द्रोणी से ढक दिया।

तब उस प्रियक कोषरक्षक को यह विचार हुआ- "राजा मुण्ड की प्रिया भद्रादेवी का देहावसान हो गया। वे अपनी इस प्रिया भद्रादेवी के शोक में "न स्वयं स्नान करते हैं, न शरीर पर गन्धविलेपन ही लगाते हैं, न भोजन करते हैं, न कोई अन्य व्यक्तिगत या शासकीय कार्य ही करते हैं। केवल भद्रादेवी के मृत शरीर पर मूर्छित हुए पड़े रहते हैं। मैं राजा मुण्ड को किस श्रमण या ब्राह्मण से उपदेश लेने के लिए कहूँ कि उसका उपदेश सुनकर ये शोकरहित होकर अपने दैनिक कार्यो में पूर्ववत प्रवृत्त हो सकें?"

उस प्रियक कोषरक्षक को यह ध्यान में आया-"आजकल पाटलिपुत्र के कुक्कुटाराम विहार में आयुष्मान नारद थेर साधना कर रहे हैं। उनके विषय में हमने प्रामाणिक सत्पुरूषों से ऐसा यशोगान (कीर्ति शब्द) सुना है- "वे पण्डित हैं, उपदेशकुशल (व्यक्त=चतुर) हैं, मेधावी (प्रतिभासम्पन्न), बहुश्रुत, अनेक प्रकार से कथा करने में कुशल, कल्याणमय ज्ञान देने वाले, वृद्ध एवं अर्हत (ज्ञानी) हैं। अच्छा हो कि राजा मुण्ड उपदेश ग्रहणहेतु उनके पास जायँ। हो सकता हैं, राजा मुण्ड का यह शोकशल्य आयुष्मान नारद थेर से धर्मश्रवण कर, उनके हृदय से निकल जाय।,

यह निश्चय कर वह प्रियक कोषरक्षक राजा मुण्ड के पास गया तथा उनसे यह बोला- "देव! पाटलिपुत्र के कुक्कुटाराम विहार में आयुष्मान नारद थेर ठहरे हुए हैं। जिनके विषय में यह कीर्ति शब्द सुना हैं- "वे पण्डित हैं, उपदेशकुशल (व्यक्त=चतुर) हैं, मेधावी बहुश्रुत अनेक प्रकार से कथा करने में कुशल, कल्याणमय ज्ञान देने वाले वृद्ध एवं अर्हत हैं। क्या ही अच्छा हो कि राजा मुण्ड उपदेश ग्रहणहेतु उनके पास जायँ। हो सकता है, आपका यह वियोग शोकशल्य आयुष्मान नारद थेर से धर्मश्रवण कर हृदय से निकल जाय।"

"तो सौम्य प्रियक! आयुष्मान नारद थेर को मेरे आने की पहले सूचना दे दो। यह कैसे सम्भव है कि मेरे राज्य में रहने वाले किसी प्रतिष्ठित श्रमण या ब्राह्मण के आवास पर विना सूचना दिये चला जाउँ" "अच्छा देव!" कहकर प्रियक कोषरक्षक ने राजा की आज्ञा मान ली, और वह आयुष्मान नारद थेर के विहार पर पहुँचा। पहुँचकर आयुष्मान नारद थेर को अभिवादन प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उसने आयुष्मान नारद थेर से यह निवेदन किया- "भन्ते! हमारे राजा मुण्ड की प्रिया भद्रादेवी का देहावसान हो गया है। अपनी उस प्रिया देवी के शोक में विह्वल होकर राजा मुण्ड अब न स्नान करता है, न शरीर पर गन्धविलेपन या भोजन करता है, न अन्य कोई शासकीय कार्य करता है। वह राजा रात-दिन केवल भद्रादेवी के शरीर पर मूर्छित होकर पड़ा रहता है। आप उनको ऐसा धर्मोपदेश करें कि उनका यह शोकशल्य उनके हृदय से निकल सके।"

"प्रियक! राजा मुण्ड जैसा समयोचित समझें।"

तब वह प्रियक कोषरक्षक आसन से उठकर आयुष्मान नारद थेर को प्रणाम प्रदक्षिणा कर, पुनः राजा मुण्ड के पास आया तथा उसको सूचित किया- "देव! आयुष्मान नारद ने आपको अपने पास आने के लिये स्वीकृति दे दी है, अब आप जैसा उचित समझें।"

"तो सौम्य प्रियक! वहाँ चलने के लिये अच्छे-अच्छे रथयान सन्नद्ध कराओ।"

"ठीक है देव!" कहकर प्रियक कोषरक्षक ने अच्छे-अच्छे यान सन्नद्ध कराकर राजा को सूचित किया- "देव! यान सन्नद्ध हो गये हैं, अब जैसा उचित समझें।"

तब राजा मुण्ड उन अच्छे यानों पर सपरिवार आरूढ होकर, राजकीय शोभा के साथ,

कुक्कुटाराम विहार में आयुष्मान नारद के दर्शन हेतु चल दिया। वह यान से जाने योग्य भूमि तक यान से जाकर तथा अवशिष्ट मार्ग को पैदल ही पार कर कुक्कुटाराम विहार में प्रविष्ठ हुआ। आयुष्मान नारद थेर के सम्मुख पहुँचकर उनको अभिवादन प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे राजा मुण्ड को आयुष्मान नारद थेर ने यह उपदेश किया- "महाराज! ये पाँच स्थान (बातें) किसी भी श्रमण या ब्राह्मण द्वारा या किसी देव या मार द्वारा या ब्रह्मा या किसी अन्य के द्वारा सर्वथा अलभ्य (न प्राप्त करने योग्य)। कौन सी पाँच?"

"(१) जराधर्म (बुढापा), (२) व्याधिधर्म (रोग) (३) मरणधर्म (४) क्षयधर्म और (५) नाशधर्म को, न प्राप्त करूँ।" लोक में यह किसी भी श्रमण या ब्राह्मण के लिये, देवता या मार के लिये, ब्रह्मा या किसी अन्य के लिये अलभ्य स्थान है।

"किसी अश्रुतवान पृथकजन, जब जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म को प्राप्त होता है, तब वह इस जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म क्षयधर्म या नाशधर्म को प्राप्त होने पर यह विचार नहीं करता- "यह जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म, मुझ अकेले को ही प्राप्त नहीं हुआ है, अपितु जहाँ तक प्राणियों का आवागमन है, उनकी उत्पत्ति या मरण है सभी को यह जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म प्राप्त होता है। अतः केवल मैं ही इस जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म के विषय मे इतना रोऊँ, कलपूँ, विलाप करूँ, छाती पीटूँ, मूर्च्छित होऊँ तो मेरा खाया पीया भी शरीर को न लगेगा, शरीर भी धीरे-धीरे क्षीण होता जायेगा, दुर्वर्ण (कुरूप) होता जायेगा, मैं अपने दैनिक कार्य भी पूर्ण न कर सकूँगा, इससे मेरे शत्रु प्रसन्न होगे तथा मित्र दुःखी होंगे। वह (यह न सोचकर) इस जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म के प्राप्त होने पर चिन्ता करने लगता है, रोने कलपने लगता है, मूर्च्छित होने लगता है। महाराज! यह कहलाता है- वह मूर्ख पृथकजन विषमय शोकशल्य से बिंधा हुआ स्वयं को (चिन्ता से) जला रहा है।"

इसके विपरीत महाराज! श्रुतवान (शास्त्राभ्यासी=धर्माभ्यासी) आर्यजन को जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म समय पर घेरता है, वह जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म के आ जाने पर यह विचारता है- मुझ अकेले पर ही यह जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म नहीं आया है, अपितु इस संसार में जितने भी प्राणियों का आगमन, गमन, च्युति, उत्पत्ति होती है उन सभी को यह जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म घेरता है। इससे घिर जाने पर, मैं किसी प्रकार की चिन्ता करूँ, रोऊँ, विलाप करूँ, छाती पीटूँ, मूर्छित होऊँ तो मेरा खाया पीया भी शरीर को न लगेगा, शरीर में दुर्वर्लता आ जायगी, शरीर या मन से होनेवाले कार्य भी पूर्ण न हो पायेंगे, यह देखकर मेरे शत्रु प्रसन्न होंगे तथा मित्र दुःखी होंगे। यह

श्रुतवान यह विचारता हुआ, इस जराधर्म, व्याधिधर्म, मरणधर्म, क्षयधर्म या नाशधर्म के प्राप्त होने पर न चिन्ता करता है, न रोता है, न छाती पीटता है, न मूर्छित होता है। महाराज! इसके विषय में कहा जाता है- "श्रुतवान आर्यश्रावक ने विषमय शोकशल्य को उखाड़ फेंका जबकि अश्रुतवान पृथकजन इस शोकशल्य में बिंधकर स्वयं को चिन्ता से जलाये रखता है।"

महाराज! लोक में किसी श्रमण ब्राह्मण के द्वारा, देव या मार के द्वारा ब्रह्मा या किसी अन्य के द्वारा ये पाँच स्थान अलभ्य ही कहे जाते हैं।,

"चिन्ता या विलाप करने मात्र से कोई छोटे से छोटा प्रयोजन सिद्ध नहीं हुआ करता। अपितु इसको शोःक तथा चिन्ता में मग्न जानकर इसके शत्रु प्रसन्न होते हैं। "जब कोई बुद्धिमान, अपने अर्थ (प्रयोजन) के विषय में भलीभाँति अवलोकन कर लेता है तो वह विचलित नही होता अपितु निश्चिन्त देखकर तथा इसके मुख पर इस कारण कोई विकृति न देखकर इसके विरोधी ही, इसकी कोई हानि न देखकर चिन्तित हो उठते हैं।"

"अतः बुद्धिमान पुरूष को चाहिये कि वार्तालाप (जल्प), मन्त्र (विचार), सुभाषित, देन-लेने (आदान-प्रदान), आदि से जहाँ जैसे भी प्रयोजन सिद्धि होते हों, वहाँ वैसा करना चाहिए।"

"जब वह किसी अर्थ के विषय में जान ले कि यह मेरे या किसी अन्य के द्वारा अलभ्य (मिलना कठिन) है तो उसके प्रति किसी भी प्रकार की चिन्ता करना इसलिये छोड देना चाहिए कि यह कर्म असम्भव है, अतः मैं भी इस विषय में क्या कर सकता हूँ।"

आयुष्मान नारद थेर द्वारा यह उपदेश किये जाने पर राजा मुण्ड ने उनसे पूछा- "भन्ते! इस धर्मपर्याय का क्या नाम है?" "महाराज! यह धर्मपर्याय (धर्मव्याख्यान) "शोकशल्यहरण" नाम से जाना जाता है।"

भन्ते! यह धर्मपर्याय अवश्य "शोकशल्यहरण" है; क्योकिं इस धर्मपर्याय को सुनकर मेरा भद्रादेवी विषयक शोकशल्य विनष्ट हो चुका है। तदनन्तर राजा मुण्ड ने अपने कोषरक्षक प्रियक को बुलाकर आदेश दिया- "सौम्य प्रियक! अब इस भद्रादेवी के शरीर को जला दो, तथा इस पर (इसकी स्मृति में) एक स्तूप बनवा दो। आज से अब हम स्नानादि करेंगे, शरीर पर गन्धविलेपन आदि भी लगायेंगे, भोजन भी करेंगे तथा अपने अन्य वैयक्तिक एवं प्रशासनिक कार्य भी यथापूर्व किया करेंगे।"

कोसलसंयुक्तं मनुष्यों को बाहरी रूप से पहचान पाना बहुत कठिन है

न वर्णरूपेन नरो सुजानो, न विस्ससे इत्तर दस्सनेन।
सुसञ्ञतानं हि वियञ्जनेन, असञ्ञता लोकमिमं चरन्ति।

(भगवान् बुद्ध-) किसी मनुष्य के बाह्य रूप से, हाव-भाव से उसको नहीं पहचाना जा सकता। अतः किसी को देखने मात्र से उसपर विश्वास न करें। अच्छे भले सयंमी का अभिनय करते हुए बड़े बड़े धूर्त असंयमी भी इस लोक में विचरण किया करते हैं। जैसे कोई कृत्रिम (बनावटी=नकली) मिट्ठी का बना दूर से सुन्दर लगने बाला, कुण्डल के समान या लोहे का बना तथा उस पर स्वर्ण का पानी चढ़ाया हुआ कोई आभूषण हो, इसी तरह कृत्रिम भेष बनाकर इस लोक में विचरण करते हैं। वे आन्तरिक चित्त से कलुषित हैं, परन्तु बाह्य भेष-भूषा से वे शोभित होते रहते हैं।

वैशारद्यसूत्र

तथागत के चार वैशारद्य (दक्षता, आत्मविश्वास)

भिक्षुओं! तथागत के ये चार वैशारद्य (दक्षता, चतुरता) हैं। इन चारों वैशारद्य से युक्त होकर ही तथागत परिषदों में आर्षभ (वृषभसमान=श्रेष्ठ) स्थान प्राप्त करते हैं, सभाओं में सिंहनाद करते है तथा ब्रह्मचक्र (आध्यात्मिक धर्मोपदेश) प्रवर्तित करतें हैं। कौन से चार?

१- आप सम्यकसम्बुद्ध हैं- आपकी ऐसी प्रतिज्ञा होते हुए भी आपके द्वारा ये धर्म अनभिसम्बुद्ध (अज्ञात एवं असाक्षात्कृत) हैं। कोई श्रमण, ब्राह्मण, देवता, मार, ब्रह्म या लोक में कोई अन्य ऐसी बात मुझे (तथागत बुद्ध को) कह सकेगा- इसमें भिक्षुओं! कोई सम्भवना नहीं देखता। ऐसी सम्भावना न देखता हुआ मैं निर्भयतापूर्वक, एवं दक्षता शान्ति के साथ अपनी धर्मसाधना में लगा रहता हूँ।

२- आप क्षीणाश्रव हैं- आपकी ऐसी प्रतिज्ञा होते हुए भी आपके आश्रव अभी तक क्षीण नहीं हुए हैं। कोई श्रमण, ब्राह्मण, देवता, मार, ब्रह्म या लोक में कोई अन्य ऐसी बात मुझे (तथागत बुद्ध) को कह सकेगा- इसमें भिक्षुओं! कोई सम्भावना नहीं देखता। ऐसी सम्भावना न देखता हुआ मैं निर्भयतापूर्वक, एवं दक्षता व शान्ति के साथ अपनी धर्मसाधना में लगा रहता हूँ।

३- आपने जो विघ्नकारक धर्मसाधना में अन्तराय (विघ्न) बताये हैं, इनका उपयोग करते हुए भी धर्मसाधना में कोई विघ्न नहीं होता- कोई श्रमण, ब्राह्मण, देवता, मार, ब्रह्म या लोक में कोई अन्य ऐसी बात मुझे कह सकेगा- इसमें भिक्षुओं! कोई सम्भावना नहीं देखता। ऐसी सम्भावना न देखता हुआ मैं निर्भयतापूर्वक, एवं दक्षता शान्ति के साथ अपनी धर्मसाधना में लगा रहता हूँ।

४- आपने जिस प्रयोजन के लिए धर्मोपदेश किया है, उसकी सम्यक आराधना से दुःखों का अन्त नहीं पाया- कोई श्रमण, ब्राह्मण, देवता, मार, ब्रह्म या लोक में कोई अन्य ऐसी बात मुझे कह सकेगा- इसमें भिक्षुओं! कोई सम्भावना नहीं देखता। ऐसी सम्भावना न देखता हुआ मैं निर्भयतापूर्वक, एवं दक्षता शान्ति के साथ अपनी धर्मसाधना में लगा रहता हूँ।

भिक्षुओं! तथागत के चार वैशारद्य हैं। इन चारों वैशारद्य से युक्त होकर तथागत परिषदों में आर्षभ=श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करतें हैं, सभाओं में सिंहनाद करते हैं तथा ब्रह्मचक्र (आध्यात्मिक धर्मोपदेश) प्रवर्तित करतें हैं।

"श्रमण ब्राह्मणों ने लोक में जो छोटे बड़े वाद उठा रखे हैं, जिनके सहारे से वे सभाओं में अध्यात्मचर्चा करते हैं, तथागत पर वे वाद किसी भी दक्षता से चरितार्थ नहीं किये जा सकते हैं। क्योकि तथागत का धर्मोपदेश दक्षतापूर्ण है तथा उसको किसी भी वाद से अतिक्रान्त नही किया जा सकता हैं।"

"जिसने अपने चित्तविकारों का दमन कर, ज्ञानी बनकर, समस्त प्राणियों पर अनुकम्पा हेतु अतिविशिष्ट धर्मचक्र का प्रर्वतन किया, ऐसे इस संसार सागर को पार करने वाले तथा देवमनुष्यों में श्रेष्ठ तथागत का सभी प्राणी अभिवादन करेंगें।"

——— ★ ★ ★ ———

अत्ता हि अत्तनो नाथो को हि नाथो परो सिया।
अत्तना'व सुदन्तेन नाथं लभति दुल्लभं।। धम्मपद

अर्थ - व्यक्ति अपना स्वामी आप है, भला दूसरा कोई (ईश्वरादि) उसका स्वामी कैसे हो सकता है? अपने ही को अच्छी तरह दमन कर लेने से वह दुर्लभ स्वामी (निर्वाण) को पाता है।

——— ★ ★ ★ ———

"गुणान मूलं भूतस्स सीलं"
(सील गुणों का आधार है।)

सब्बदानं धम्मदानं जिनाति । (सभी दानों में धर्मदान श्रेष्ठ है।)

आगामी प्रकाशन-दैनिक बुद्ध वन्दना सहित परित्ताण पाठ (कलर पेज में ५००० प्रतियाँ)

श्रद्धावान उपासक/उपासिकाऐं बुद्धशासन के प्रचार-प्रसार के लिये निःशुल्क धम्मप्रकाशन हेतु यथासामर्थ्य निम्न माध्यम से धम्मदान करें।

Name : **MAHA BODHI SOCIETY OF INDIA LUCKNOW CENTER**
A/C No. : **27330100011899**
IFSC : **BARB0BLYLUC**
Branch : **Bank of Baroda, G.B. Marg, Lucknow.**
PhonePay, G-Pay, PAYTM : **7318036520**

निवेदन - इस पुस्तक में भगवान बुद्ध के उपदेश संग्रहित किये गये हैं। इन उपदेशों को स्वयं अध्ययन कर अपने परिवारीजनों एवं मित्रगणों को अध्ययन हेतु अवश्य प्रदान करें।